सविनय अवज्ञा आन्दोलन

Course – M.A. History, Part-II, Paper – XIII ; Prepared by – Dr. P.K. Podder

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में सविनय अवज्ञा आन्दोलन का महत्वपूर्ण योगदान है। ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध भारतीयों का महान ऐतिहासिक संघर्ष 1930 ई० में प्रारंभ हुआ। इस सविनय अवज्ञा आन्दोलन का नेतृत्व महात्मा गाँधी ने किया। नमक बनाने की आजादी से सिविल ~~नाफरमानी~~ नाफरमानी या सविनय अवज्ञा का जो आन्दोलन शुरू हुआ, उसकी परिणति एक ऐसे विराट जनांदोलन में हुई, जिसमें ब्रिटिश सरकार की नैतिक सत्ता बिल्कुल ध्वस्त हो गयी। अहिंसा के सिपाही लाठियों की मार सहते, फिर भी अपनी जगह पर अडिग रहते। सरकार परेशान थी कि इस शांतिपूर्ण, अहिंसक संघर्ष का सामना कैसे किया जाये। इस संभव तरीके से दमन करने ~~करने~~ और तमाम तरह के काले कानून बनाने के बाद उसने महसूस किया कि कांग्रेस से समझौता किये बिना काम नहीं चलेगा। दूसरी ओर आंदोलन में भी थकान आ रही थी। नतीजा सामने आया गाँधी – इरविन समझौते के रूप में, जिससे कांग्रेस की प्रतिष्ठा और बढ़ गयी। यह एक अनोखा अहिंसक संघर्ष था, जिसमें पुलिस और कांग्रेस के स्वयंसेवकों के बीच एक तरह की प्रतिद्वंद्विता चल रही थी कि वह कितनी चोट पहुँचा सकती है और वे कितना सहन कर सकते हैं। इस आन्दोलन के महत्वपूर्ण परिणाम निकले।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन न तो बड़ी भारी सफलता ही थी और न ही पूर्ण असफलता। आन्दोलन स्वराज्य अथवा पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रारंभ किया गया था। यह उद्देश्य तो प्राप्त नहीं हो सका था और न ही कहीं दिखाई ही देता था। इंगलैंड अभी भी भारतीय भाग्य का निर्विवाद रूप से सूत्रधार बना रहा।

इस आन्दोलन ने देश को अधिक बड़े सरकार-विरोधी अभियानों के लिए तैयार कर दिया। यद्यपि सविनय अवज्ञा आन्दोलन का

दूसरा चरण इतना सफल नहीं हुआ फिर भी इसने भारत में अंग्रेजी साम्राज्य को बहुत बुरी तरह झिंझोड़ दिया। अब गाँधीजी को भी और सरकार को भी यह पता लग गया कि कांग्रेस 1920-22 और 1930-34 के नाटक बार-बार कर सकती है।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन से भारत-अंग्रेज सम्बन्धों में एक नया मोड़ आया। सरकार को यह स्पष्ट हो गया था कि भारतीय राजनीति में कांग्रेस एक महत्त्वपूर्ण तत्व है और आने वाले किसी भी संवैधानिक सुधारों में इसकी अवहेलना करना संभव नहीं। मार्च 1930 में इरविन ने गाँधीजी से भेंट करने से इन्कार कर दिया था परन्तु उसी वर्ष के अंत तक सरकार ने यह अनुभव किया कि कांग्रेस का प्रभाव अधिक व्यापक है और इसे संवैधानिक विचार-विमर्श में लाना आवश्यक है। इसलिए जनवरी 1931 में वाइसराय, भारत सचिव तथा अंग्रेजी प्रधानमंत्री ने अनुरंजक भाषण दिये ताकि गाँधी जी सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित कर दें और लंदन में होने वाली गोलमेज सम्मेलन में सम्मिलित हों। इस प्रकार सरकार ने कांग्रेस को एक विरोधी पक्ष की प्रतिष्ठा प्रदान कर दी थी जिसकी सरकार अनदेखी नहीं कर सकती थी। एक अत्यन्त चतुर टीकाकार ने कहा है कि अब भारत और इंगलैंड में समानता का सिद्धान्त स्थापित हो गया था और यह एक बड़ी बात थी।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन भारतीय राष्ट्रवाद के इतिहास में दूसरा सार्वजनिक राष्ट्रीय संघर्ष था जो सन् 1934 में समाप्त हो गया। इसका जन-आधार सन् 1921 के जन आन्दोलन से अधिक व्यापक था। इससे भारतीय जनता में बढ़ती हुई राजनीतिक चेतना का सबूत मिलता है। कांग्रेस की गतिविधियों को जितना अधिक जन समर्थन मिला, उतना जनसमर्थन मिलने की संभावना न तो कांग्रेस के पदाधिकारियों को थी और न सरकारी अधिकारियों को। जुलाई के शुरू तक ब्रिटिश भारत का ऐसा कोई प्रांत नहीं बचा था जहाँ आन्दोलन का

असर न पड़ा हो। साधारण लोग, जिनमें किसान भी थे, बड़ी तादाद में राष्ट्रीय आन्दोलन में शामिल हुए। पहली बार उनके अपने व्यापक, राजनीतिक एवं आर्थिक संगठन भी बने। किन्तु आन्दोलन का संचालन कांग्रेस के बुर्जुआ नेताओं के हाथ में रहा। सुमित सरकार के अनुसार सविनय अवज्ञा आन्दोलन में बुर्जुआ वर्ग ने काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। भारतीय बुर्जुआ वर्ग का अखिल भारतीय दृष्टिकोण उभर कर सामने आने लगा था। उनकी माँगों की स्पष्ट झलक गाँधी जी की ग्यारह सूत्री कार्यक्रम में देखने को मिलती है। यद्यपि इस वर्ग की अपनी सीमाएँ थीं, किन्तु इसमें शक नहीं कि इस वर्ग ने, न केवल सविनय अवज्ञा आन्दोलन के छिड़ने में ही मदद की थी, बल्कि इसके वापस लिए जाने में भी इसका बहुत बड़ा हाथ था। किसानों ने पूरे दिल से आन्दोलन में भाग लिया। गाँधी जी को वे अपना निर्विवाद नेता मानते थे। गाँधी जी के आह्वान पर उन्होंने बड़ी तादाद में सविनय अवज्ञा आन्दोलन में हिस्सा लिया। लगान कम कराने का आन्दोलन बहुत सारे प्रदेशों में चला। बिहार के किसानों ने अनेक क्षेत्रों में चौकीदारी टैक्स देना बंद कर दिया। किसानों के साथ-साथ इस युग में मजदूरों में भी वर्ग-चेतना व्यापक रूप से देखने को मिलती है। संक्षेप में, भारत के विभिन्न वर्ग ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के दैवानी राज को समाप्त करने के लिए लड़ाई में कूद पड़े। शताब्दी के तीसरे दशक में देश के कई भागों में कुछ महत्त्वपूर्ण किसान आन्दोलन भी हुए, जैसे बारदोली सत्याग्रह आदि। लेकिन इस सबके बावजूद सविनय अवज्ञा आन्दोलन किसानों को कोई राहत दिलाए बिना ही समाप्त हो गया।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सामाजिक आधार को बहुत विस्तृत बना दिया। पुरुष, स्त्रियाँ, युवक, छात्र, कृषक, श्रमिक, बूढ़े तथा बच्चों समेत समस्त राष्ट्र

ने इस आन्दोलन में भाग लिया। स्त्रियों ने पहली बार, राष्ट्रीय संघर्ष में इतनी बड़ी संख्या में भाग लिया। असहयोग आन्दोलन की तुलना में इस आन्दोलन को महिलाओं का अप्रत्याशित योगदान प्राप्त हुआ। हजारों महिलाएँ, जिनमें बहुत सी ऊँची घरानेकी और उच्च शिक्षा प्राप्त थीं और कुछ तो वस्तुतः पर्दानशीन थीं, घरों की चहारदीवारी से बाहर निकल आईं और कांग्रेस प्रदर्शनों तथा धरनों में भाग लेने लगीं। बहिष्कार आन्दोलन की सफलता का प्रमुख कारण यही था। औरतों ने सिविल नाफरमानी के इस पूरे आन्दोलन में हजारों की संख्या में हिस्सा लिया। वे धरना देतीं, प्रतिबंधित जुलूसों और प्रदर्शनों में शामिल होतीं, कानून तोड़तीं और जेल जातीं। दिल्ली जैसे दकियानूस शहर में भी 1600 स्त्रियाँ जेल गयीं। स्त्रियों के भाग लेने से पुरुषों में और भी उत्साह आया। हिन्दुस्तानी सेवा दल की स्वयंसेविकाएँ जब नारंगी रंग की खादी की धोती पहने और बाँह पर तिरंगा पट्टा लगाये, सड़कों और दुकानों पर धरना देतीं, तो इससे काफी राजनीतिक उत्तेजना की सृष्टि होती थी। एच० एन० ब्रेल्सफर्ड तथा जार्ज स्लाकोम्ब जैसे विदेशी प्रेक्षकों ने ठीक ही कहा है कि यदि सविनय अवज्ञा आन्दोलन ने कुछ और न भी उपलब्ध किया हो तो केवल स्त्रियों का उद्धार ही उसकी पर्याप्त उपलब्धि है। लेकिन औरतों का सहयोग ज्यादातर शहरों तक सीमित रहा। गाँवकी औरतें, खासकर उन गाँवों की, जो गाँधी-आश्रमों के निकट थे, शराब विरोधी अभियान और जंगल सत्याग्रह के दौरान जगीं।

भारत के युवकों विशेषकर छात्रों ने, इस स्वतंत्रता संग्राम में अत्यधिक सहयोग दिया। इसी प्रकार ग्रामीण जनता, जिसमें कृषक और भूमिपति दोनों सम्मिलित थे, ने भूमिकर तथा अन्य सरकारी कर तथा आय कर देने से इन्कारी कर दी। बम्बई, अहमदाबाद तथा कलकत्ता जैसे औद्योगिक नगरों से श्रमिकों ने इस स्वतंत्रता संघर्ष में बड़े उत्साह से भाग लिया।

मिल मालिकों ने कांग्रेसी अभियानों में दिल खोलकर चन्दा दिया। छोटे-छोटे बच्चों ने भी कांग्रेस के समाचार बुलेटिनों को स्थान-स्थान पर पहुँचाकर और प्रभात फेरियों में भाग लेकर अपना योगदान दिया।

वास्तव में समस्त राष्ट्र जाग उठा। सभी सम्प्रदायों तथा राजनीतिक दलों के सदस्यों ने भिन्न-भिन्न मात्रा में इस संघर्ष में भाग लिया। हिन्दुओं की सभी श्रेणियाँ अत्यधिक रूप से इस युद्ध में लिप्त थीं। दूसरी ओर मुसलमानों की संख्या बहुत नहीं थी, परन्तु फिर भी उत्साहवर्धक थी। 'जमायते-उलमा', 'मुस्लिम राष्ट्रीय दल' तथा 'एहरारुल इस्लाम' जैसे मुस्लिम दलों ने इस संघर्ष में भाग लिया परन्तु सबसे अधिक भूमिका उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्त में खान अब्दुल गफ्फार खाँ के स्वयं सेवक संगठन 'खुदाई खिदमतगारों' ने निभाई। उत्तर पश्चिमी सीमाप्रान्त के पठान कबाइलियों ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद को चुनौती दी और भारत की स्वतंत्रता के लिए युद्ध किया।

इस आन्दोलन की सबसे बड़ी महत्ता यह थी कि इसने भारतीयों में निडरता की भावना उत्पन्न कर दी थी और वे सरकार के अत्याचार का विरोध शांतिपूर्ण ढंग से करने लगे। लाचारी में ब्रिटिश सरकार को प्रान्तों में उत्तरदायी सरकार की स्थापना करनी पड़ी। सविनय अवज्ञा आन्दोलन के फलस्वरूप कांग्रेस एक जनप्रिय संस्था बन गयी। 1937 के निर्वाचन में भारत के अधिकांश प्रान्तों में कांग्रेस का मंत्रिमंडल बनाया गया। अतः यह आन्दोलन सर्वथा निरर्थक नहीं था।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन में जहाँ बड़े-बड़े व्यापारियों और पूँजीपतियों से लेकर शहरी निम्न मध्य वर्ग के लोगों, तथा गाँवों में किसानों और जनजातियों ने भी हिस्सा लिया, आन्दोलन से साम्यवादी दल के नेतृत्व में संगठित औद्योगिक मजदूर वर्ग की

अनुपस्थिति महत्त्वपूर्ण (और साथ ही आश्चर्यजनक) बात थी।
अप्रैल 1930 में इरविन ने बेन को लिखा था कि संगठित मजदूर वर्ग ने अपने-आपको सविनय अवज्ञा आन्दोलन में शामिल नहीं किया है। हालाँकि मई में गाँधी की गिरफ्तारी के प्रतिक्रियास्वरूप शोलापुर में मजदूरों ने जबर्दस्त विरोध का प्रदर्शन किया था। साथ ही बंबई के और कई अन्य केन्द्रों के मजदूरों ने भी आन्दोलन में हिस्सा लिया था। यह साबित करता है कि कांग्रेस से प्रभावित मजदूरों ने इस आन्दोलन में हिस्सा लिया था। किन्तु, आम तौर पर पहले की अवधि की तुलना में मजदूरों ने कोई खास महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं निभाई। ए०आर० देसाई ने भी लिखा है: "1927 के बाद भारतीय मजदूर वर्ग ने स्वतंत्र राजनीतिक हैसियत प्राप्त करनी शुरू की। उसका अपना झंडा और अपना स्वतंत्र वर्गीय कार्यक्रम था। मजदूर वर्ग का अच्छा-खासा अंश संयुक्त राष्ट्रीय आन्दोलन में अपने खुद के नेतृत्व के पीछे चला। ----- 1930-33 के सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भी मजदूर वर्ग के कुछ लोगों ने भाग लिया।"

आम तौर पर हम कह सकते हैं कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन असहयोग आन्दोलन की तुलना में काफी व्यापक था। इस सबके बावजूद यह आन्दोलन अपने उद्देश्य की प्राप्ति कर सका। इसमें संदेह है। कांग्रेस की सबसे बड़ी कमजोरी यह थी कि उनके पास स्वतंत्र भारत के लिए कोई भी ऐसा आर्थिक-सामाजिक कार्यक्रम नहीं था जिसके अन्तर्गत गरीब मजदूर और किसानों का उद्धार किया जा सके। कांग्रेस के अंदर उभर रहे समाजवादी तत्वों ने जब इस ओर गाँधी का ध्यान आकृष्ट करना चाहा, तो उन्होंने इसमें कोई दिलचस्पी नहीं दिखलाई। बल्कि उन्होंने ऐसे कदम उठाए जिससे समाजवादी तत्व कांग्रेस संगठन में उभर न पाएं। इस तरह राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में कांग्रेस सदा ही बुर्जुआ वर्ग के हितों का ही प्रतिनिधित्व करती रही, और इस बुर्जुआ नेतृत्व के अगुआ थे गाँधी। गाँधीवादी राजनीतिक विचारधारा और तदनुरूप वर्ग-

सम्बन्धों के अनुकूल इस नेतृत्व ने राष्ट्रीय आन्दोलन का क्षेत्र संकुचित और सीमित रखा।

चूँकि आन्दोलन गरीब मजदूर और किसानों की स्थिति में कोई खास सुधार किए बगैर ही समाप्त हो गया, इससे कांग्रेस के अधीन इस गुट को भारी सदमा पहुँचा। इन्हीं लोगों ने आगे चलकर कांग्रेस समाजवादी पार्टी की स्थापना की। समाजवादी तत्वों के अलावा उदारवादी भी कांग्रेस संगठन से अलग होने लगे थे।

इस सबके बावजूद सविनय अवज्ञा आन्दोलन की उपलब्धियों को नकारा नहीं जा सकता। इस आन्दोलन से कुछ स्थायी लाभ हुआ। समाज के विभिन्न तबके के लोगों ने पहली बार खुलकर इस आन्दोलन में भाग लिया। इस आन्दोलन के पीछे जनता की असीम श्रद्धा, निष्ठा, त्याग और समर्थन था। जो विफलता इसे मिली, वह अस्थायी थी। इतने वर्षों तक चलते रहने वाले संघर्ष की भट्ठी में तपकर इस आन्दोलन ने जनता में एक नई और अपेक्षाकृत अधिक राष्ट्रीय एकता, आत्मविश्वास, गौरव तथा दृढ़ संकल्प को जन्म दिया।

ब्रेल्सफोर्ड ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन के नतीजों की चर्चा करते हुए लिखा है: "भारतीय अपना दिमाग निश्चित कर चुके थे, अपने दिलों में वे स्वतंत्रता प्राप्त कर चुके थे, गाँधी ने एक सौम्य तथा निष्क्रिय राष्ट्र को शताब्दियों की तंद्रा से जगा दिया था।" सन् 1930-34 के आन्दोलन से सबक लेकर लोग संघर्ष के अगले दौर की तैयारी में जुट गए जब उन्हें आजादी हासिल होने ही वाली थी। हम लोग लुई फिशर के इस कथन से समाप्त कर सकते हैं: "अप्रत्यक्ष रूप से ही 1928-30 के बीच भारतीय लोग स्वतंत्र हो गये, कम-से-कम आंशिक रूप में स्वतंत्रता तो 1930-31 में मिल ही गयी। 1930 तक भारतीयों का अंग्रेजों की आज्ञाओं का स्वयमेव पालन करना एक भूतकाल की बात बन गयी थी। अब तो दो सौदा करने वालों के बीच मोल-तोल हो रहा था।"